इकाई 26 सुधार आंदोलन-I

इकाई की रूपरेखा

26.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन से आप

- समाज के बहुआयामी परिवर्तन को लक्षित करते हुए नये विचारों के विकास की प्रक्रिया।
- 19वीं सदी के भारतीय चिंतकों और सामाजिक सांस्कृतिक जीवन के विविध पहलुओं पर उनके विचारों, तथा
- भारत में विद्यमान सामाजिक-सांस्कृतिक-धार्मिक आस्थाओं पर इन नये विचारों के समग्र प्रभावों के बारे में जानकारी कर पाएंगे।

26.1 प्रस्तावना

आधुनिक भारत के इतिहास में उन्नीसवीं सदी का कालखंड अत्यंत महत्वपूर्ण है। इस अवधि में ही विविध पहलुओं से राष्ट्रीय पुनर्रचना के लिए अनेक बौद्धिक धाराओं का आविर्भाव देश में हम पाते हैं : धार्मिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और राजनीतिक। यद्यपि बौद्धिक प्रयास सर्वांगीण सुधारों को लक्षित थे, मुख्य जोर सामाजिक एवं धार्मिक पहलुओं पर ही था। आंदोलन का दृष्टिबोध बहुआयामी होते हुए भी चिंतन में आर्थिक एवं राजनीतिक समस्याओं के सापेक्ष सामाजिक एवं सांस्कृतिक समस्याओं को प्रधानता प्राप्त थी। संक्षेप में, सामाजिक-सांस्कृतिक सुधार ही उन्नीसवीं सदी के भारत में बौद्धिक अभियानों के मुख्य प्रतीक बने।

सदी के आरंभिक दशकों में यह आंदोलन कुछ थोड़े से व्यक्तियों का सीमित प्रयास भर था। सामाजिक अंधविश्वासों के विरुद्ध संघर्ष की उत्कर्ष आकांक्षा रूढ़िवादियों के लिए कोई बड़ी चुनौती न बन सकी। फिर भी आंदोलन ने अपना संवेग बनाये रखा और उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्ध में अपने उत्कर्ष पर पहुंच गया। इस इकाई में हम उपरोक्त प्रक्रिया का कालक्रमगत सीमाओं से परे जाकर उन्नीसवीं सदी के परवर्ती दशकों में हुए विकास पर भी विचार करेंगे। ताकि एक समग्र स्वरूप सामने रखा जा सके।

यहां हम उन्नीसवीं सदी में सुधारों को लक्षित बौद्धिक, सामाजिक और धार्मिक आंदोलनों की आधारभूत विशेषताओं का अध्ययन करेंगे। पहले हम संक्षेप में प्रबुद्ध व्यक्तियों के विचारों और क्रियाकलापों (इकाई 26) की चर्चा करेंगे और फिर समूचे देश के संदर्भ में आंदोलन के बारे में सामान्य निष्कर्ष रखेंगे (इकाई 27)। बहरहाल, चिंतकों एवं सुधारकों के जीवन प्रसंगों के चित्रण पर नहीं, बल्कि आंदोलन के विचारधारात्मक आधार की रचना करने वाले विचारों पर बल दिया गया है।

26.2 पूर्वी भारत

पूर्वी भारत में राममोहन राय द्वारा समाज की बुराइयों के उन्मूलन का पहला कदम उठाया गया था। जो प्रक्रिया राममोहन राय ने शुरू की उसको देवेन्द्रनाथ टैगोर, विद्यासागर, केशवचन्द्र सेन और अन्य और लोगों ने उन्नीसवीं शताब्दी तक जारी रखा। यहां पर हम उनकी सामाजिक और धार्मिक धारणाओं की अलग-अलग विवेचना करेंगे।

26.2.1 राममोहन राय के विचार

राजा राममोहन राय को समुचित ही आधुनिक भारत का जनक कहा गया है। एक बहुआयामी व्यक्तित्व के धनी उन्होंने राष्ट्रीय जीवन के लगभग सारे पहलुओं को उठाया और भारतीय राष्ट्र की पुनर्रचना के लिए संघर्ष किया। उन्होंने कई भाषाओं का ज्ञान प्राप्त किया और अपने समय के एक प्रकांड पंडित के रूप में प्रसिद्ध हुए।

उनकी पहली दार्शनिक कृति **तुहाफत-उल-मुवाहिदीन** 1905 में प्रकाशित हुई जिसमें उन्होंने 'विवेक' तथा 'सामाजिक सुखलाभ' संबोधित विचारों की रोशनी में विश्व के मुख्य धर्मों का विश्लेषण किया। उन्होंने धर्म को विवेक से परे मात्र आस्था का विषय मानने से इंकार किया और जुड़े-चामत्कारिक मिथकों के पर्दाफाश का प्रयास किया।

1814 में कलकत्ता में बस जाने के बाद राममोहन राय की सुधार-सक्रियता और तेज हुई। उन्होंने **आत्मीय सभा** का गठन किया और धार्मिक एवं सामाजिक कुरीतियों के विरुद्ध सतत संघर्ष चलाया। उन्होंने मूर्ति पूजा की भर्त्सना की और एकांतवाद का पक्ष लिया। स्वदेशी ग्रंथों की वास्तविक शिक्षाओं के बारे में जनसमुदाय को अनभिज्ञ रखकर धार्मिक बुराइयों को बनाये रखने के लिए उन्होंने ब्राह्मण पुरोहितों को दोषी ठहराया। जनशिक्षा के उद्देश्य से उन्होंने कुछेक ग्रंथों का बंगाली अनुवाद प्रकाशित किया और एकेश्वरवाद के पक्ष में धुआंधार लेखन किया। स्थानीय भाषा में उनके अनुवाद और लेखन में बंगला भाषा के विकास को प्रोत्साहन मिला।

राममोहन राय अपने समूचे सक्रियता-काल में 'हेतुवादी' बने रहे। ''तुहाफत'' में उनके ''हेतुवाद'' का पूर्ण परिपाक देखा जा सकता है। उनकी परिवर्ती रचनाओं में भी यथार्थ की कसौटी के रूप में विवेक को उसका समुचित स्थान मिलता है। यद्यपि बाद में चलकर उन्होंने धर्मग्रंथों का आश्रय लिया, लेकिन ऐसा हिंदू समाज में सुधारों को बढ़ावा देने के लिए ही उन्होंने किया।

1828 में उन्होंने एक नये समाज **ब्रह्म सभा** की स्थापना की जो बाद में ब्रह्म समाज के नाम से प्रसिद्ध हुआ। उनका प्राथमिक उद्देश्य था हिंदुत्व को उसकी बुराइयों से अलग करना और एकांतवाद का प्रचार-प्रसार। इसमें अन्य धर्मों की श्रेष्ठ शिक्षाएं भी समाहित की गईं। यह मानवतावाद, एकांतवाद और सामाजिक पुनर्सृजन के पोषण के लिए शक्तिशाली मंच बना।

वर्तमान सामाजिक पतनशीलता को लेकर राममोहन अत्यंत दुखी थे। समाज में महिलाओं की दारुण दशा विशेष रूप से उनके सरोकार का विषय बनी। उन्होंने सती-प्रथा के विरुद्ध व्यापक अभियान चलाया। उनके आंदोलनकारी प्रयासों के फलस्वरूप अंततः 1829 में भारत के गवर्नर जनरल **लार्ड विलियम बैंटिंक** ने इस प्रथा के विरुद्ध एक कानून लागू किया। लेकिन विधवा जीवन के लिए जो समाधान उन्होंने सुझाया, वह पुनर्विवाह नहीं बल्कि तपश्चर्या ही था।

उन्होंने बहुविवाह एवं बालविवाह की भर्त्सना की और समाज में महिलाओं के उत्पीड़न एवं निम्नस्तर का विरोध किया। उन्होंने उनकी समस्याओं का मूलकारण सम्पत्ति अधिकारों का अभाव बताया। उनके विचार से, भारतीय समाज को सामाजिक जड़ता से मुक्त करने के लिए महिला शिक्षण एक अन्य प्रभारी माध्यम था।

उन्होंने आधुनिक शिक्षा के प्रवर्तन एवं प्रसार के लिए काम किया, जो देश में आधुनिक विचारों के प्रमुख साधन की भूमिका निभा सकती थी। इसके संवर्धन के लिए उन्होंने डेविड हेयर को सोत्साहन समर्थन दिया, जिसने कलकत्ता के अनेक गणमान्य व्यक्तियों के साथ मिलकर प्रसिद्ध हिंदू कालेज की स्थापना 1817 में की। उन्होंने अपने ही खर्चे से कलकत्ता में एक अंग्रेजी स्कूल भी चलाया। 1825 में उन्होंने वेदांत कालेज की स्थापना की जिसमें भारतीय तथा पाश्चात्य दोनों ही प्रकार के अध्ययनों की सुविधा थी।

राममोहन ने भारत में पाश्चात्य वैचारिक ज्ञान, गणित, प्राकृतिक दर्शन, रसायन, शरीरक्रिया विज्ञान और अन्य उपयोगी विज्ञानों के शिक्षण की आवश्यकता पर बल दिया। पाश्चात्य बौद्धिक विकास के सन्निहित संप्रेरणों को वे समझते थे और चाहते थे कि भारत के लोग भी यूरोप की प्रगति के परिणामों से परिचित हों। उनका लक्ष्य था पूर्व और पश्चिम की सर्वोत्तम विशेषताओं का समन्वय।

राममोहन ने अपने समय की सामाजिक एवं धार्मिक ही नहीं, बल्कि राजनीतिक एवं आर्थिक समस्याओं को भी उठाया। उन्होंने सरकारी सेवाओं के भारतीयकरण, न्यायिक कार्रवाई, कार्यपालिका तथा न्यायपालिका के अधिकार क्षेत्र अलग करने और भारतवासियों तथा यूरोपवासियों के बीच न्यायिक समानता का पक्ष लिया। उन्होंने जमींदारी व्यवस्था के अंतर्गत उत्पीड़क कार्रवाइयों की तीखी आलोचना की।

राममोहन भारत में राष्ट्रवादी चेतना एवं विचारधारा के जनक थे। सामाजिक एवं धार्मिक सुधारों को लक्षित उनका प्रत्येक प्रयास राष्ट्रनिर्माण को लक्षित था। अपने सुधार प्रस्तावों के माध्यम से वे विविध समुच्चयों में विभाजित भारतीय समाज की एकता स्थापित करना चाहते थे। उन्होंने विशेष रूप से जाति-व्यवस्था की कठोरता पर प्रहार किया जो उनके विचार से भारतवासियों में फूट का कारण बनी थी। उन्होंने इस तथ्य पर जोर दिया कि अमानुषिक जाति-व्यवस्था ने एक ओर जनसमुदाय में असमानता एवं विभाजन को जन्म दिया है, दूसरी ओर उन्हें देशभक्ति की भावनाओं से वंचित किया है।

अपने रुझानों में राममोहन अंतर्राष्ट्रवादी, इच्छा स्वातंत्र्यवादी एवं जनतांत्रिक विचारों के पक्षधर थे। अंतर्राष्ट्रीय मामलों में वे सक्रिय रुचि लेते थे और राष्ट्रों के बीच मैत्री संबंध चाहते थे। स्वतंत्रता, जनवाद एवं राष्ट्रवाद संबंधी अपने सरोकार के चलते ही उन्होंने 1821 में नेपल्स में क्रांति की विफलता का समाचार सुनने पर अपने प्रतिदिन होने वाले कार्यक्रम खत्म कर दिए थे। 1823 में स्पैनिश अमेरिका में क्रांति की सफलता का समारोह उन्होंने प्रीतिभोज देकर किया।

अपनी सीमाओं के बावजूद राममोहन निश्चय ही उन्नीसवीं सदी के भारतीय बौद्धिक क्षितिज पर पहले प्रकाशवान नक्षत्र थे। 1833 में इस महान भारतीय ने दूसरों के अनुसरण के लिए अपने विचारों की विरासत तथा आधुनिकता का संदेश छोड़ते हुए महाप्रयाण किया।

1: राममोहन राय

26.2.2 यंग बंगाल

इसी समय के आस पास यंग बंगाल नाम से विख्यात नव युवक बंगाली बौद्धिकों की टोली द्वारा नये एवं मूलगामी विषयों का प्रचार-प्रसार होने लगा। इस आंदोलन की पहल मुख्य रूप से हिंदू कालेज के आंग्लो-इंडियन शिक्षक हेनरी विवियन देरोजियो (1809-1831) ने की थी। एक मुक्तचिंतक एवं हेतुवादी के रूप में उसने अपने विद्यार्थियों में मूलगामी एवं आलोचनात्मक दृष्टिकोण को प्रोत्साहित किया और सभी अधिकारवादी प्रवृत्तियों को प्रश्नाधीन बनाया। वह स्वातंत्र्य प्रेमी तथा सत्य का उपासक था। "देरोजियोवादी" कहे जाने वाले उसके अनुगामियों ने पुरानी, पतनशील रीतियों एवं परंपराओं पर प्रहार किया और हिंदू समाज एवं धर्म के समूचे ढांचे के सामने प्रश्नचिन्ह लगाया। देरोजियो के अनुगामी पक्के हेतुवादी थे और प्रत्येक चीज की परीक्षा विवेक की कसौटी पर करते थे। अपने मूलगामी विचारों के कारण देरोजियो 1831 में हिंदू कालेज से निकाल दिया गया और इसके कुछ समय बाद ही कालरा से 22 वर्ष की अल्पायु में ही उसका देहावसान हो गया।

2. हेनरी विवियन देरोजियो

26.2.3 देवेन्द्रनाथ और केशवचन्द्र

इस बीच सुधार प्रयासों को राममोहन से मिलने वाले उत्प्रेरण का संवेग बहुत कुछ खत्म हो गया था। रवीन्द्रनाथ टैगोर के पिता देवेन्द्रनाथ टैगोर ने पुन: इसमें जीवन का संचार किया। समाज से स्वतंत्र रूप में राममोहन के आदर्शों को आगे बढ़ाने के लिए उन्होंने 1839 में तत्वबोधिनी सभा की स्थापना की। भारत में ईसाई धर्म की तेज प्रगति का प्रतिरोध और वेदांत का विकारत उनका लक्ष्य था।

तत्वबोधिनी सभा के अधीन स्थानीय भाषा एवं संस्कृति के विकास पर अधिकाधिक बल दिया जाने लगा। सभी विषयों से संबंधित पुस्तकें बंगला में प्रकाशित की गई। **तत्वबोधिनी प्रेस** की स्थापना के बाद 1843 में विचारों के प्रचार-प्रसार के लिए संगठन के पत्र, तत्वबोधिनी पत्रिका की शुरुआत की गई। 1843 में देवेन्द्रनाथ टैगोर ने ब्राह्मण विचारों को अपनाया और उसी वर्ष उन्होंने **ब्रह्म समाज** का पुनर्गठन किया।

ब्रह्म समाज से जुड़े एक अन्य प्रमुख बौद्धिक व्यक्तित्व थे केशवचन्द्र सेन। केशव ने नारी-मुक्ति प्रयासों पर बल दिया। देवेन्द्रनाथ द्वारा राष्ट्रीय हिंदू अस्मिता के विपरीत उन्होंने सार्वभौमिक विचारों को पुष्ट किया। अपने बीच सिद्धांतगत विभेदों के बावजूद ब्राह्मण स्वामियों ने राममोहन के विचारों के प्रचार तथा बंगाल के समाज को बदलने में सामूहिक योगदान किया। उन्होंने धार्मिक मामलों में मठाधीशों की मध्यस्थता की भर्त्सना की और एक ईश्वर की अराधना का पक्ष लिया। उन्होंने विधवा विवाह, एक-विवाह और महिला शिक्षा का समर्थन किया।

26.2.4 विद्यासागर और विवेकानन्द

उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्ध में पंडित ईश्वर चंद्र विद्यासागर सामाजिक परिदृश्य पर उभरे। प्रकांड संस्कृत विद्वान के रूप में वे 1851 में संस्कृत कालेज के प्राचार्य बने। उन्होंने संस्कृत

कालेज में पाश्चात्य शिक्षा का प्रवर्तन किया और गैर ब्राह्मण विद्यार्थियों को भी प्रवेश दिया। उन्होंने बंगला भाषा की प्राथमिक पुस्तिका लिखी और बंगला की विशिष्ट आधुनिक गद्य शैली के विकास में योगदान किया। उनका महान योगदान महिला शिक्षा के क्षेत्र में ही था। विधवा विवाह के विशिष्ट सामाजिक मसले को उन्होंने अपना समूचा जीवन समर्पित कर दिया। विधवाओं के पुनर्विवाह को वैध बनाने हेतु उनके आंदोलन को देश के विभिन्न भागों के प्रबुद्ध समुदायों का समर्थन मिला और अंततः एक तत्संबंधित कानून लागू किया गया। विद्यासागर के संरक्षण में उच्च जातियों के बीच पहला विधवा विवाह 1856 में संपन्न किया गया। उनके प्रयासों द्वारा 1855 और 1860 के बीच 25 विधवा विवाहों को विधिवत मान्यता मिली। मूलगामी सामाजिक सुधारों के इतिहास में निश्चय ही यह पहली प्रमुख उपलब्धि थी और राममोहन द्वारा प्रस्तावित तापसिक विधवा जीवन की तुलना में एक प्रगतिशील कदम था। उन्होंने सामान्य उन्नति के उद्देश्य से महिलाओं की उच्च शिक्षा को प्रोत्साहन दिया। 1849 में कलकत्ता में स्थापित **बेथुन स्कूल** के सचिव के रूप में उन्होंने महिला शिक्षा आंदोलन के नेतृत्व में केन्द्रीय भूमिका निभाई। उन्होंने बाल विवाह तथा बहु विवाह के विरुद्ध भी प्रचार अभियान चलाया।

समूचे हिंदू समाज को आलोकित कर देने वाले नरेन्द्रनाथ दत्त, जो स्वामी विवेकानंद के रूप में विख्यात हैं, उन्नीसवीं सदी बंगाल के महानचिंतकों की शृंखला में कालक्रमानुसार अंत में आते हैं। उनके गुरु अथवा आध्यात्मिक अनुदेशक थे रामकृष्ण परमहंस (1834-1886)। रामकृष्ण ने सार्वभौम धार्मिकता पर बल दिया और धर्म विशेष की श्रेष्ठता के दावों की निंदा की। फिर भी, उनका प्राथमिक सरोकार धार्मिक मोक्षलाभ ही रहा, न कि सामाजिक मुक्ति।

उनके सुप्रसिद्ध शिष्य विवेकानंद (1863-1902) ने देश-विदेश में उनके संदेश को लोकप्रिय बनाया। विवेकानंद ने जाति-प्रथा और जनसमुदाय में व्याप्त रूढ़ रीतियों व अंधविश्वासों की भर्त्सना की। 1896 में उन्होंने मानवतावादी व समाज सेवा कार्य चलाने के लिए **रामकृष्ण मिशन** की स्थापना की। मिशन का मुख्य लक्ष्य था जनसमुदाय के लिए सामाजिक सुविधाएं जुटाना। देश के विभिन्न भागों में स्कूल, अस्पताल, अनाथालय, पुस्तकालय इत्यादि चलाकर इसने अपने लक्ष्यों को पूरा करने का प्रयास किया।

3. ईश्वर चंद्र विद्यासागर

बोध प्रश्न 1

1) 100 शब्दों में धर्म तथा भारत में महिलाओं की दशा पर राममोहन राय के विचारों को स्पष्ट कीजिए।

....

....

....

2) निम्नांकित में से प्रत्येक पर तीन वाक्यों में टिप्पणी लिखिए।

यंग बंगाल आंदोलन

....

....

....

ब्रह्म समाज

....

....

....

तत्वबोधिनी सभा

....

....

....

26.3 पश्चिमी भारत

पश्चिमी भारत में सुधार की प्रक्रिया का प्रमुख केन्द्र बिन्दु धार्मिक और दार्शनिक की जगह सामाजिक था। पूरी 19वीं शताब्दी में विविध नीची जातियों में सामाजिक विभेदीकरण के बारे में जागरुकता बढ़ी। विचारक जैसे विष्णुबाबा ब्रह्मचारी, ज्योतिबा फूले, रानाडे और अन्य लोगों ने इस सामाजिक जागरुकता को बढ़ाने में काफी महत्वपूर्ण योगदान दिया।

26.3.1 उन्नीसवीं शताब्दी का प्रारम्भिक समय

महाराष्ट्र में बौद्धिक विद्रोह की पहली गूंज उन्नीसवीं सदी के प्रारंभिक दशकों में सुनी गई थी। आंदोलन की पहल तथा नेतृत्व करने वाले शुरुआत के बौद्धिकों में सर्वप्रमुख थे बाल शास्त्री जांबेकर (1812-1846), दादोबा पांडुरंग तारखडकर (1814-1882) और भास्कर पांडुरंग तारखडकर (1816-1847), ''लोकहितवादी'' नाम से सुपरिचित गोपाल हरि देशमुख (1823-1882), और आजीवन अविवाहित रहने वाले विष्णु बाबा ब्रह्मचारी नाम से लोकप्रिय विष्णु भीखाजी गोखले (1825-1873) महाराष्ट्र में बौद्धिक आंदोलन के प्रवर्तक थे जांबेकर। अठारहवीं सदी के चौथे दशक में अपनी अनेक रचनाओं के माध्यम से उन्होंने आंदोलन का आधार बनाया। दादोबा ने इसको संगठनिक स्वरूप दिया। 1840 में परमहंस सभा की स्थापना करके, जो उन्नीसवीं सदी महाराष्ट्र का पहला सामाजिक सुधार संगठन था।

भास्कर पांडुरंग ने भारत में औपनिवेशिक शासन के जुझारू राष्ट्रवादी आलोचक के रूप में विशिष्टता प्राप्त की। भारत में अंग्रेजी राज्य के शोषक चरित्र को उजागर करने वाले पहले व्यक्ति वही थे। 1841 में उन्होंने बंबई प्रेसिडेंसी के सबसे पुराने पत्र **बंबई गजट** में आठ खंडों की एक लेखमाला प्रकाशित कराई और औपनिवेशक प्रभुत्व के लगभग सभी पक्षों का पर्दाफाश किया।

''लोकहितवादी'' की मुख्य भूमिका आंदोलन के क्षेत्र को व्यापक बनाने की थी 1848-50 में उन्होंने मराठी साप्ताहिक पत्र **प्रभाकर** में अपने प्रसिद्ध **शतपत्रेण** (सौ पत्र) लिखे। यह महाराष्ट्र में आरंभिक बौद्धिक प्रयासों में एक महत्वपूर्ण कदम साबित हुआ। अपनी **समग्रता** में ये पत्र इतने आयामों को समेटते हैं कि सामाजिक जीवन का शायद ही कोई पहलू अछूता रहता हो।

ब्रह्मचारी जातिगत भेदभाव के **घोर** विरोधी थे और **मानवजाति** की एकता में आस्था रखते थे। स्वयं ब्राह्मण होते हुए भी उन्होंने अपने लिए एक मुसलमान रसोइया नियुक्त किया था और किसी के भी द्वारा परोसा गया खाना खा लेते थे। इस प्रकार उन्होंने जाति-प्रथा की कट्टरता को खुलेआम चुनौती दी और **समता मूलक** समाज व्यवस्था के लिए सक्रिय रहे।

जबकि बंगाल में आंदोलन की धारा धार्मिक तथा दार्शनिक थी, महाराष्ट्र के संदर्भ में सुधार-प्रयासों के अंतर्गत मुख्यत: सामाजिक मसलों को ही प्रधानता पाते हम देखते हैं। महाराष्ट्र में आरंभिक बौद्धिक आंदोलनकर्ता सूक्ष्म दार्शनिक प्रश्नों से सरोकार रखने वाले धार्मिक चिंतक प्रकृति के नहीं थे। उनका दृष्टिकोण अधिक व्यावहारिक था। उदाहरण के लिए, **परमहंस सभा** का मुख्य उद्देश्य सभी जातिगत भेदभावों का समापन था। **सभा** की

सदस्यता लेने वाले प्रत्येक नये व्यक्ति को "दीक्षा संस्कार" की प्रक्रिया से गुजरना होता था और किसी भी प्रकार के जातिगत भेदभाव से दूर रहने का संकल्प करना पड़ता था। उसे एक ईसाई द्वारा सेंकी गई रोटी खानी पड़ती थी और मुसलमान के हाथ से पानी पीना पड़ता था। **सभा** का चरित्र एक **गुप्त सोसाइटी** का था। रूढ़िवादियों के रोष से बचने के लिए इसकी गोष्ठियां अत्यंत गोपनीय स्थिति में की जाती थी। इस प्रकार जाति-प्रथा और अन्य सामाजिक कुरीतियों को चुनौती देने का प्रयास इस सभा के थोड़े से सदस्यों तक ही सीमित रहा।

26.3.2 उन्नीसवीं शताब्दी के बाद का समय

सुधार आंदोलन को अधिक बल मिल पाया सदी के उत्तरार्ध में ही। बौद्धिक परिदृश्य पर अनेक **मूर्धन्य** व्यक्तित्व उभरे। उनमें सबसे महत्वपूर्ण थे विष्णु परशुराम शास्त्री पंडित (1827-1876), ज्योतिबा फूले (1827-1890), रामकृष्ण गोपाल भंडारकर (1837-1925), नारायण महादेव परमानंद (1838-1893), महादेव गोविंद रानाडे (1842-1901), विष्णुशास्त्री चिपलंकर (1850-1882), के.टी. तैलंग (1850-1893), गणेश वासुदेव जोशी (1851-1911), नारायण गणेश चंदावरकर (1855-1923) और गोपाल गणेश आगरकर (1856-1895)।

विष्णु परशुराम शास्त्री पंडित ने अपने सार्वजनिक जीवन का आरंभ विधवा-विवाह के समर्थन से किया। महिला मुक्ति आंदोलन के क्षेत्र में उनकी अग्रणी भूमिका थी। 1865 में उन्होंने **विधवा विवाह उत्तेजक मंडल** की स्थापना की और उसका सचिव पद संभाला। एक विधवा से 1875 में विवाह करके स्वयं एक उदाहरण प्रस्तुत किया। माली जाति में पैदा हुए ज्योतिबा फूले स्वयं एक दलित समुदाय के प्रतिनिधि के रूप में उभरे। वे पहले भारतीय थे जिसने अछूतों के लिए एक विद्यालय की स्थापना 1854 में की। उन्होंने भारतीय महिलाओं की मुक्ति के लक्ष्य को भी **मुखर** किया। 1851 में उन्होंने अपनी पत्नी के साथ पूना में एक बालिका विद्यालय स्थापित किया।

अपनी गहन विद्वता से **भंडारकर** ने "महर्षि" की उपाधि प्राप्त की। रूढ़िवादियों के घनघोर विरोध के बावजूद उन्होंने 1891 में अपनी विधवा पुत्री का विवाह कराया। हिंदू-मुस्लिम एकता के प्रबल पक्षधार गिनेचुने लोगों में से एक वह थे। **"पोलिटिकल रेक्लूस"** (Political recluse) उपनाम से लिखने वाले परमानंद एक महान समाजसुधारक होने के अलावा अंग्रेजी प्रशासन के रचनात्मक आलोचक थे।

उनके विचार से जातिगत भेदभाव भारतीय सामाजिक व्यवस्था का सबसे बड़ा कलंक था। उन्हें इस बात का पूरा बोध था कि धार्मिक सुधारचेतना को अपनाये बिना सामाजिक-सुधार आंदोलन जनसमुदाय को प्रभावित नहीं कर सकता। उनके निर्देशों के अधीन 1867 में **परमहंस सभा** का पुनर्गठन **प्रार्थना समाज** के रूप में किया गया। अपने जीवन के अंत तक उन्होंने बौद्धिक सामर्थ्य एवं व्यवहार कुशलता के साथ आंदोलन का संचालन किया। **प्रार्थना सभा** ने एकांतवाद की शिक्षा दी और धर्माध्यक्षों के प्रभुत्व तथा जातिगत भेदभाव की निंदा की। तेलुगू समाज सुधारक वीरेशलिंगम के प्रयासों के माध्यम से इस समाज के क्रियाकलापों का प्रसार दक्षिण भारत तक हुआ।

चिपलूंकर ने समाजसुधार को समर्पित मासिक मराठी पत्रिका **निबंधमाला** की शुरुआत 1874 में की। 32 वर्ष की अल्पायु में ही उनका देहावसान हो गया। बंबई में अनिवार्य प्रारंभ शिक्षा के प्रवर्तन में तुलंग की केंद्रीय भूमिका थी। उपकुलपति पद प्राप्त करने वाले वे प्रथम भारतीय थे। जोशी ने अपनी मुख्य पहचान बनाई राजनीति के क्षेत्र में। उन्होंने ब्रिटिश सरकार की आर्थिक नीति की बुद्धिमत्तापूर्ण समीक्षा सामने रखी। फिर भी, वे उन बौद्धिकों के साथ एकमत थे जो शिक्षा को सामाजिक परिवर्तन का सर्वाधिक प्रभावशाली साधन मानते थे।

मूलत: दार्शनिक रुझानों वाले **चंदावरकर** प्रार्थना समाज के अग्रणी कार्यकर्ता थे। **अगरकर** औघड़, रूढ़िभंजक प्रकृति के और समझौताविहीन हेतुवादी थे। परंपरा के अंधानुसरण और भारत के अतीत के मिथ्या महिमा मंडन की उन्होंने अत्यंत तीक्ष्ण भर्त्सना की।

बंबई के अन्य सुधार आंदोलनकर्ता थे नौरोजी फुर्दोजी, दादाभाई नौरोजी और एस.एस. बंगाली। 1851 में उन्होंने **रहनुमाई मज़दायसन सभा** नाम के धार्मिक संगठन की स्थापना की। इसका उद्देश्य था पारसी आस्थाओं तथा सामाजिक प्रथाओं का आधुनिकीकरण। महिलाओं की शिक्षा के प्रवर्तन एवं प्रचार-प्रसार करने, उनको वैधानिक अधिकार दिलवाने और समूचे पारसी समुदाय में उत्तराधिकार व विवाह के लिए एक जैसे कानून बनवाने के लिए इस सभा ने संघर्ष चलाये।

26.4 उत्तरी भारत

उत्तरी भारत में सामाजिक तथा धार्मिक सुधार आंदोलन के संचालक थे स्वामी दयानंद सरस्वती (1824-1883), जिन्होंने 1875 में **आर्य समाज** की स्थापना की। स्वामी दयानंद ने मूर्तिपूजा, बहुदेववाद, ब्राह्मणों द्वारा पोषित धार्मिक कर्मकांडों और अंधविश्वासों पर प्रहार किया। उन्होंने अंतर्जातीय विवाह और महिला-शिक्षा का पक्ष लिया। लेकिन वेदग्रंथों की ओर उनके झुकाव ने उनकी शिक्षाओं को एक रूढ़िवादी प्रकृति प्रदान की।

आर्य समाजियों ने उत्तरी भारत में सामाजिक सुधार लक्ष्यों को बढ़ाने में प्रगतिशील भूमिका निभाई। उन्होंने महिलाओं की स्थिति में सुधार के लिए कार्य किया, सामाजिक समानता का समर्थन किया और अस्पृश्यता एवं जातिभेद की भर्त्सना की। यद्यपि वे वेदग्रंथों को प्रश्नातीत मानते थे, उनके द्वारा समर्थित सुधार आधुनिक विवेकसम्मत चिंतन की उपज थे।

भारतीय मुसलमानों में सुधार आंदोलन अपेक्षाकृत देर से, अठारहवीं सदी के सातवें दशक में ही उभरे। सैयद अहमद खान (1817-1898) ने पतनशील मध्ययुगीन विचारों को छोड़ने के लिए, तथा आधुनिक वैज्ञानिक ज्ञान तथा दृष्टिकोण अपनाने के लिए मुसलमानों से अपील की। उन्होंने बहु विवाह प्रथा की निंदा की और महिलाओं में पर्दा-प्रथा खत्म करने व शिक्षा के प्रसार का समर्थन किया। सहिष्णुता की शिक्षा देते हुए उन्होंने विवेकसम्मत विचार एवं स्वतंत्र चिंतन के विकास का आह्वान किया।

आधुनिक शिक्षा का संवर्धन उनका प्रमुख सरोकार था और इसके लिए उन्होंने आजीवन कार्य किया। पाश्चात्य शिक्षा के प्रसार के लिए उन्होंने 1875 में अलीगढ़ के मुहम्मद आंग्लो-ओरियंटल कालेज की स्थापना की। इस कालेज ने बाद में अलीगढ़ मुस्लिम विश्वविद्यालय का रूप लिया।

वे कुरान को मुसलमानों के लिए सर्वाधिक विश्वसनीय और विवेकासम्मत धार्मिक ग्रंथ मानते थे। सभी धर्मों के प्रति आदरभाव रखते हुए उन्होंने धर्मोन्माद के विरुद्ध आवाज उठाई। उनके कुछ अनुगामी उभर रहे राष्ट्रीय आंदोलन से अपने को अलग बनाये रखा, यह विश्वास करते हुए कि दोनों समुदाय अपने-अपने अलग रास्तों से विकास कर सकते हैं।

26.5 दक्षिणी भारत

दक्षिण भारत में आरंभ के दौर में समाजसुधार आंदोलन के एक प्रमुख व्यक्तित्व थे कंडुकरि विरशेलिंगम (1848-1919)। कलकत्ता तथा बंबई सुधार आंदोलन में सक्रिय अनेक समकालीन व्यक्तियों से भिन्न वीरशेलिंगम एक निर्धन परिवार में जन्मे थे। अपने जीवन के अधिकांश समय में उन्होंने स्कूल-शिक्षक पद पर काम किया। निर्बाध लेखन सामर्थ्य से संपन्न उन्होंने तेलुगू भाषा में अनेकानेक प्रबंधों एवं प्रपत्रों की रचना की। इसीलिए उन्हें आधुनिक तेलुगू गद्यसाहित्य का जनक कहा जाता है। विधवा-पुनर्विवाह, नारी शिक्षा, महिला-मुक्ति एवं सामाजिक बुराईयों के उन्मूलन जैसे विषयों के प्रति उनके उत्साह ने उन्हें आंध्र के समाजसुधारकों के आगामी पीढ़ी के लिए पितातुल्य बना दिया।

उस समय के मद्रास प्रेसिडेंसी क्षेत्र में समाज सुधार प्रयासों की अखिल भारतीय लहर को अनेक प्रकार के जाति संगठनों एवं जातीय आंदोलनों के अस्तित्व ने एक विशिष्ट स्वरूप दे दिया। सदी के ढलान तक आते-आते अनेक जातीय संगठन सुधार आंदोलनों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने लगे। वे बहुधा संबंधित जाति के सामाजिक उत्थान से असंबद्ध नहीं थे। उदाहरण के लिए, ऐसा देखा जा सकता है तमिलनाडु की गुंडर (Gunder) जाति के संगठन **कोंगु वेल्लला संगम**, मैसूर के वक्कलिका तथा लिंगायत संगठनों, केरल के इरावा जाति के एस.एन.डी.पी. योगम इत्यादि के रूप में। जातीय आंदोलनों के नेता, बहुधा अपारंपरिक ढंग से, अभिजनों के रूप में उभरे। उन्होंने जाति विशेष के सदस्यों की सामान्य विरासत पर बल दिया और सामाजिक एवं रीतिगत व्यवहारों में परिवर्तन का प्रयास किया। एक महत्वपूर्ण विशेषता यह थी कि मूलतः आंतरिक सुधारों को लक्षित जातीय संगठनों ने क्रमशः सशक्त राजनीतिक शक्तियों का रूप ले लिया। इस विकासक्रम, जिसने बीसवीं सदी में जाकर परिपक्व रूप ले लिया, की चर्चा हम यहां नहीं करेंगे।

बोध प्रश्न 2

1) उन्नीसवीं सदी महाराष्ट्र के सामाजिक-धार्मिक सुधार आंदोलनों की प्रमुख धाराओं का विवेचन कीजिए। 100 शब्दों में उत्तर लिखिए।

....

....

....

....

2) निम्नांकित वाक्यों को पढ़ें और सही (✓) अथवा गलत (×) के चिन्ह लगाएं।
   i) आर्यसमाजियों ने अस्पृश्यता तथा जातिगत कट्टरता की भर्त्सना की।
   ii) आर्यसमाजियों ने अंतर्जातीय विवाह का समर्थन नहीं किया।
   iii) सर सैयद अहमद खान धार्मिक सहिष्णुता के पक्ष में थे तथा उन्होंने विचार स्वातंत्र्य का समर्थन किया।
   iv) आंध्र के समाज सुधार आंदोलनों के प्रमुख व्यक्तित्व वीरशेलिंगम महिला शिक्षा के पक्ष में नहीं थे।
   v) दक्षिण भारत के जाति संगठनों ने सामाजिक-धार्मिक सुधारों में कोई भूमिका नहीं निभाई।

26.6 सारांश

उन्नीसवीं सदी के सामाजिक पुनर्रचना प्रयासों के लिए सामाजिक-सांस्कृतिक बुराइयों का सम्यक बोध एक महत्वपूर्ण प्रस्थान-बिंदु था। महिलाओं की पतित स्थिति, बाल विवाह, सती प्रथा, बहु विवाह, विद्यायापन की बाध्यता, जातिप्रथा, अस्पृश्यता, मूर्तिपूजा, बहुदेववाद, कर्मकांड, धर्माध्यक्षों का प्रभुत्व तथा समाज में व्याप्त अंधविश्वास इत्यादि पर न्यूनाधिक मात्रा में तीक्ष्ण बौद्धिक प्रहार किए गये।

वर्तमान बुराइयों के बोध के प्रयास से जुड़ा हुआ था, समाज व्यवस्था के पुनर्बिन का प्रयास। महिलाओं की स्थिति में सुधार, बाल विवाह का उन्मूलन, एक विवाह, विधवा विवाह, जातिगत भेदभाव की समाप्ति, एकांतवाद, आध्यात्मिक साधना, सामाजिक मतांधता एवं अंधविश्वासों का अंत सुधारकों के सामान्य उद्देश्य थे, यद्यपि उपरोक्त प्रत्येक व्यक्ति ने इनमें से प्रत्येक लक्ष्य को प्रोत्साहित नहीं किया। सन्निहित सरोकार था एक सुधरी हुई सामाजिक-सांस्कृतिक व्यवस्था के आधार पर भारतीय समाज की सर्वांगीण प्रगति।

26.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

बोध प्रश्न 1

1) आपको अपने उत्तर में मूर्ति पूजा की भर्त्सना, एकांतवाद का पक्ष, हेतुवाद पर जोर, सती प्रथा को समाप्त करने के प्रयास, नारी-शिक्षा, महिलाओं द्वारा संपत्ति पर अधिकार इत्यादि विषयों का उल्लेख करना चाहिए। देखें उपभाग 26.2.1

2) देखें उपभाग 26.2.2 और 26.2.3

बोध प्रश्न 2

1) आपको अपने उत्तर में सामाजिक-धार्मिक कुरीतियों पर विभिन्न विचारकों के विचार और उच्च जाति के प्रभुत्व तथा अस्पृश्यता के विरूद्ध महाराष्ट्र में नई चेतना का जिक्र करना चाहिए। देखें भाग **26.3**

2) i) ✓ ii) × iii) ✓ iv) × v) ×